मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर

रिट याचिका क्रमांक **159/1996**

याचिकाकर्ता: आर.एन. राणा, उम्र लगभग 50 वर्ष, पिता श्री नटवर सिंह राणा निवासी एल.आई.जी. 28, सेक्टर-1, शंकर नगर, रायपुर तहसील एवं जिला रायपुर (म.प्र.)

बनाम

उत्तरवादीगण: 1. देना बैंक, द्वारा अध्यक्ष, बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अन्तरण) अधिनियम, 1970 के तहत निगमित एक बैंककारी कंपनी, जिसका मुख्यालय मेकर टावर्स 'ई', कफ परेड, बॉम्बे 400 005 ।

2. महाप्रबंधक, कार्मिक प्रशासन और सामाजिक बैंकिंग (पीएएसबी) देना बैंक, मेकर टावर्स ई' कफ परेड, बॉम्बे 400 005।

3. उप-महाप्रबंधक, देना बैंक, मेकर टावर्स 'ई' कफ परेड, बॉम्बे 400 005।

4. सहायक महाप्रबंधक (कार्मिक), कार्मिक विभाग, 7 वीं मंजिल, देना बैंक, मेकर टावर्स 'ई', कफ परेड, बॉम्बे 400 005।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद **226** के तहत रिट याचिका

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक **159/1996**

याचिकाकर्ता		आर. एन. राना
	बनाम	
उत्तरवादीगण		देना बैंक एवं अन्य

आदेश हेतु सुचीबद्ध दिनांक - 06.09.2025

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही/–
सतीश के अग्निहोत्री
न्यायाधीश

छत्तीसगढ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक **159/1996**

याचिकाकर्ता		आर. एन. राना
	बनाम	
उत्तरवादीगण		देना बैंक एवं अन्य

एकल पीठ : माननीय न्यायमूर्ति श्री सतीश के. अग्निहोत्री

याचिकाकर्ता की ओर से	: सुश्री दीपाली पांडे, अधिवक्ता।
उत्तरवादीगण की ओर से	: श्री पी.एस. कोशी, अधिवक्ता

आदेश
(06/09/2006)

न्यायालय का निम्नलिखित आदेश न्यायमूर्ति सतीश के. अग्निहोत्री द्वारा पारित किया गया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

1. याचिकाकर्ता ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन यह याचिका निष्कासन आदेश दिनांक 30.8.1989 (अनुलग्नक पी/1), आदेश दिनांक 24.02.1990 (अनुलग्नक पी/4) के द्वारा अपील की खारिजी, आदेश दिनांक 06.04.1992 (अनुलग्नक पी/8) के द्वारा पुनर्विलोकन याचिका के निरस्तीकरण, आदेश दिनांक 7/16.4.1992 (अनुलग्नक पी/7) के द्वारा याचिकाकर्ता को सूचित किया गया और आदेश दिनांक 15.9.1995 (अनुलग्नक पी/11) के द्वारा पुनर्विलोकन अपील के निरस्तीकरण को आक्षेपित करते हुए और सेवा में बहाली, निलंबन भत्ता या परिणामिक लाभों के साथ आंशिक वेतन देने की मांग कर प्रस्तुत की गई है।

2. संक्षेप में निर्विवाद तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता उत्तरवादी–देना बैंक का कर्मचारी था। सुसंगत समय में याचिकाकर्ता 1985 से 1986 की अवधि के दौरान जिला रायपुर के अभनपुर शाखा में शाखा प्रबंधक के रूप में पदस्थ था। याचिकाकर्ता को दिनांक 01.09.1988 (अनुलग्नक आर/1) का आरोप पत्र–सह–निलंबन आदेश इस प्रभाव का दिया गया कि शाखा प्रबंधक के रूप में, स्वीकृति पत्र दिनांक 11.12.1984 के अनुसार क्रेडिट सुविधाओं का पालन करते हुए, मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट के क्रेडिट के लिए कई चेक क्रय गए, जिसमें याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित अनियमितताएं कीं: –

1. याचिकाकर्ता सामान्य बैंकिंग प्रक्रिया का पालन करने में विफल रहा।
2. उन्होंने कपटपूर्वक एकोमोडेशन चेक के रूप में क्रय किया ।
3. उसने चेक/चेकों को दूसरे चेक/चेकों से बदल दिया।

4. उसने क्रय किये गए चेकों के अग्रेषण अनुसूची में हेराफेरी की/बदलाव किया/परिवर्तित किया ताकि ऐसा प्रतीत हो कि चेक उक्त अग्रेषण चेक अनुसूची की तिथि को क्रय किये गए हैं और इस तरह क्रय की वास्तविक तिथि को छिपाया।

5. उसने चेक केवल इस आशय से क्रय किये कि मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट को मेसर्स मरायन सॉ मिल (जिनके चेक पहले क्रय किये गए थे) को क्रेडिट करने के लिए उपरोक्त खाते के माध्यम से धन/प्रेषण की अनुमति दी जा सके ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बाद में क्रय किये गए चेक अदाता शाखा में मान्य किए जाएं।

6. याचिकाकर्ता ने अनाधिकृत रूप से चेकों को अपने निजी संरक्षण में रखा तथा बैंक के रजिस्टर में गलत प्रविष्टियां दर्ज की। जिससे ऐसा प्रतीत हो कि चेकों को हमदस्त भेजा गया था।

7. उन्होंने गुढियारी शाखा के शाखा प्रबंधक/अधिकारियों से दुस्संधि कर यह सुनिश्चित करने का अनुरोध किया कि अभनपुर शाखा द्वारा क्रय किये गए चेक के संबंध में गुढियारी शाखा के क्रेडिट एडवाइस उसी दिन अभनपुर शाखा में प्राप्त हो जाएं जिस दिन याचिकाकर्ता ने अभनपुर शाखा में अनुवर्ती चेक क्रय किये थे, ताकि एकोमोडेशन चेक क्रय करने में सुविधा हो।

8. याचिकाकर्ता ने मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट द्वारा जमा किये गये चेकों में से एक को अपने निजी अभिरक्षा में रख लिया, जिसे उसने दिनांक 03/12/1986 को मुख्यालय के सतर्कता अधिकारियों को सौंप दिया तथा अपना दोष स्वीकार कर लिया।

9. याचिकाकर्ता ने ग्राहक को और/या स्वयं को और/या मेसर्स नारायण सॉ मिल को अनुचित लाभ/आर्थिक लाभ पहुंचाने के एकमात्र आशय से चेक क्रय कर मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट को अनुचित ऋण सुविधाएं प्रदान की, जिससे बैंक को भारी वित्तीय जोखिम/हानि उठानी पड़ी।

याचिकाकर्ता के उपरोक्त कृत्य/कृत्यों का विवरण आरोप पत्र के साथ संलग्न अनुलग्नक 'क' में वर्णित है।"

3. यह भी आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 05/04/1985 को बीपी 123 के अधीन 39000 रुपये का एक बिल क्रय किया, जो मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट के नाम पर आहरित था। उक्त बिल ओधव शाखा, अहमदाबाद द्वारा दिनांक 17/06/1985 को वापस कर दिया गया। मेसर्स पटेल टिम्बर मार्ट से ब्याज सहित बिल की राशि वसूलने के बजाय, याचिकाकर्ता ने दिनांक 27/06/1985 को बीपी 177 के अधीन उसी बिल को पुनः क्रय करना चुना और बीपी 123 की पिछली प्रविष्टि को उलट दिया। इसके बाद बिल क्रमांक 177 बिना भुगतान के वापस आ गया और याचिकाकर्ता ने बैंक की बहियों में कोई नोटिंग/टिप्पणी, लेखन नहीं किया और उक्त वापस प्राप्त बिल को अपने पास रख लिया। याचिकाकर्ता ने 15.60 रुपये डाक शुल्क का भुगतान किया जब उक्त बिल को भारतीय स्टेट बैंक,

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

राखियाल द्वारा वापस किया गया। याचिकाकर्ता उपरोक्त ओधव शाखा, अहमदाबाद के माध्यम से बिल राशि वसूलने में भी विफल रहा।

4. याचिकाकर्ता के उपरोक्त कृत्यों को ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, परिश्रम, कर्तव्यों के निर्वहन में समर्पण की कमी और/या बैंक के अभिलेख में हेराफेरी करने और/या तथ्यों को छिपाने के लिए चालाकी करने और/या बैंक के साथ विश्वासघात करने और/या बैंक के हित को हानि पहुंचाने वाले कार्य/कार्यों के रूप में माना गया, जिससे बैंक को भारी वित्तीय हानि/जोखिम में शामिल होना या शामिल होने की संभावना है और/या बैंक अधिकारी के अनुचित कार्य/कार्यों के रूप में माना गया। कदाचार के उक्त कृत्य, यदि सिद्ध हो जाते हैं, तो देना बैंक अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम 1976 के विनियम 24 सहपठित विनियम 3(1) का उल्लंघन है, जो देना बैंक अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम 1976 के अंतर्गत दंडनीय है। याचिकाकर्ता को 7 दिन की अवधि के भीतर अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए कहा गया है।

5. उक्त आरोप-पत्र निलंबन आदेश के जवाब में याचिकाकर्ता ने दिनांक 30.9.1988 (अनुलग्नक आर/2) को अपना जवाब प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता ने अपने पत्र दिनांक 03.12.1986 में अपने विरुद्ध अधिरोपित प्रमुख आरोपों को पहले ही स्वीकार कर लिया है। याचिकाकर्ता ने 16 वर्षों की अपनी सेवा और पांच बच्चों को ध्यान में रखते हुए उसे क्षमा करने की दया याचिका प्रस्तुत की। याचिकाकर्ता ने दिनांक 19.10.1988 (अनुलग्नक आर/3) को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसमें स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हुए स्वीकार किया कि उसके द्वारा अवैधताएं की गई हैं, हालांकि, यह तर्क दिया गया कि चूंकि बैंक को कोई हानि नहीं हुई है, इसलिए याचिकाकर्ता के प्रकरण पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किया जाना चाहिए और उसे वेतन वृद्धि रोके जाने से दंडित किया जाए।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

6. श्री वी.के. जैन को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया। याचिकाकर्ता को सम्यक नोटिस दिया गया और याचिकाकर्ता ने जांच में भाग लिया, और जांच में भी याचिकाकर्ता ने स्पष्ट शब्दों में अपना दोष स्वीकार किया, और कहा कि याचिकाकर्ता को कोई हानि नहीं हुई है और याचिकाकर्ता के प्रकरण को सहानुभूतिपूर्वक निराकरण किया जाना चाहिए। जांच अधिकारी ने दिनांक 11.7.1989 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

7. अनुशासनिक प्राधिकारी अर्थात आंचलिक प्रबंधक ने जांच अधिकारी द्वारा विरचित और साबित किए गए आरोपों के निष्कर्ष को स्वीकार करते हुए, देना बैंक अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम 1976 के विनियम 7(3) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए, दिनांक 30.8.1989 के आदेश (अनुलग्नक पी/1) द्वारा बिना किसी नोटिस के अपचारी अधिकारी को पदच्युत कर दिया। याचिकाकर्ता

द्वारा अपीलीय प्राधिकारी अर्थात उप महाप्रबंधक (सामाजिक बैंकिंग विभाग) के समक्ष दिनांक 12.9.1989 को प्रस्तुत की गई वैधानिक अपील, दिनांक 24.2.1990 (अनुलग्नक पी/4) के मेमो द्वारा खारिज कर दी गई, जिसमें आंचलिक प्रबंधक, म.प्र. अंचल, भोपाल द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की गई।

8. अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत की गई पुनर्विलोकन याचिका दिनांक 1.5.1990 को भी महाप्रबंधक (पीएएसबी) (पुनर्विलोकन प्राधिकारी) द्वारा आदेश दिनांक 6.4.1992 (अनुलग्नक पी/8) के माध्यम से खारिज कर दी गई थी, जिसे याचिकाकर्ता को दिनांक 7.4.1992 के मेमो (अनुलग्नक पी/7) के माध्यम से सूचित किया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 26.8.1995 को प्रस्तुत की गई द्वितीय पुनर्विलोकन याचिका को भी पोषणीय न होने के आधार पर दिनांक 15.9.1995 के मेमो (अनुलग्नक पी/11) के माध्यम से खारिज कर दिया गया था।

9. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री दीपाली पांडे ने तर्क प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने यह याचिका इस आधार पर प्रस्तुत की है कि याचिकाकर्ता को कोई जांच प्रतिवेदन नहीं दी गई, जांच के दौरान सुसंगत दस्तावेज नहीं दिए गए और याचिकाकर्ता को दिया गया दंड याचिकाकर्ता द्वारा किए गए कदाचार के कृत्यों के अनुपात में नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने उधारकर्ताओं को दिए गए अग्रिमों के संबंध में दावा आवेदन के खंड (vii) का अवलंब लिया कि दावे के अधीन क्रेडिट सुविधा/सुविधाओं के संबंध में हानि क्रेडिट सुविधा के आंकलन, पर्यवेक्षण और अनुवर्ती कार्यवाही के संबंध में आवश्यक सुरक्षा उपायों और प्रक्रियाओं के पालन में किसी उपेक्षा या हमारे कर्मचारियों की ओर से किसी बेईमानी या हमारे या निगम द्वारा जारी निर्देशों के विपरीत या उल्लंघन में उनके द्वारा लिए गए निर्णयों के कारण नहीं हुआ है, यह प्रस्तुत करने के लिए कि याचिकाकर्ता ने क्रेडिट सुविधा के आंकलन, पर्यवेक्षण और अनुवर्ती कार्यवाही के संबंध में सभी आवश्यक सुरक्षा उपायों और प्रक्रियाओं का पालन किया था। इस प्रकार, याचिकाकर्ता को क्रेडिट सुविधा के संबंध में हानि का दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

10. उत्तरवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री पी.एस. कोशी ने प्रतिपक्ष में तर्क प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को अपना पक्ष रखने का पूरा अवसर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने दिनांक 30.9.1988 और 19.10.1988 के अपने अभ्यावेदन में तथा विभागीय कार्यवाही में भी अपने विरुद्ध अधिरोपित सभी प्रमुख आरोपों को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है। याचिकाकर्ता ने इस बात से इनकार नहीं किया है कि उसके विरुद्ध अधिरोपित कोई भी कृत्य उसके द्वारा नहीं किया गया था, बल्कि उसने यह स्पष्टीकरण दिया है कि कुछ परिस्थितियों के कारण ऐसा किया गया था तथा बैंक को कोई वित्तीय हानि नहीं हुई है।

11. उत्तरवादीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याचिकाकर्ता को आदेश के साथ जांच प्रतिवेदन भी दिया गया था, जो आदेश के पठन से ही स्पष्ट है। अंतिम आदेश पारित होने से पहले कोई नोटिस नहीं दिया गया, क्योंकि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों में जब याचिकाकर्ता के विरुद्ध अधिरोपित आरोपों को याचिकाकर्ता ने स्वीकार कर लिया है, तो शास्ति के अधिरोपण से पहले जांच के बाद उसे द्वितीय कारण बताओ नोटिस देने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होता। याचिकाकर्ता को उसकी आवश्यकता के अनुसार सभी सुसंगत सामग्री दी गई।

12. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा याचिका के साथ संलग्न अभिलेखों तथा जवाबदावों का अवलोकन किया है। यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता ने अपने विरुद्ध अधिरोपित सभी आरोपों को स्वीकार किया है तथा याचिकाकर्ता का बचाव केवल इस सीमा तक था कि बैंक को कोई वित्तीय हानि नहीं हुई है। याचिकाकर्ता को आदेश के साथ जांच प्रतिवेदन भी दी गई थी। जांच प्रतिवेदन प्राप्त करने के पश्चात याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी, पुनरीक्षण प्राधिकारी का शरण लिया । इस प्रकार, दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी करने का उद्देश्य भी पूरा हो गया है तथा याचिकाकर्ता के पास जांच प्रतिवेदन पर अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने का पर्याप्त अवसर है। याचिकाकर्ता यह सिद्ध करने में भी विफल रहा है कि जांच के पश्चात दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी न करने से उसे कोई हानि हुई है या नहीं। अतः प्रकरण के तथ्यों तथा परिस्थितियों के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि जांच करने तथा उसके पश्चात समाप्ति का आदेश पारित करने से पूर्व प्रक्रियागत आवश्यकताओं को पर्याप्त रूप से पूरा किया गया है तथा जांच में तथा उसके पश्चात कोई अनियमितता, अनुचितता या अवैधता नहीं पाई गई है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

13. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आवेदन पत्र, क्रेडिट सुविधा के खंड (vii) का अवलंब लेना गलत है, क्योंकि आरोप यह है कि याचिकाकर्ता ने उपेक्षा की है तथा ग्राहकों को क्रेडिट सुविधा प्रदान करते समय अपेक्षित प्रक्रिया का पालन नहीं किया है।

14. विवेका नंद सेठी बनाम चेयरमैन, जे एंड के बैंक लिमिटेड एवं अन्य (2005) 5 एससीसी 337} प्रकरण में कंडिका 22 में सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की है:–

> "22. नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत, पूर्वप्रचलित है, किंतु नियंत्रित नहीं है। जब तथ्य स्वीकार कर लिए जाते हैं, तो जांच केवल औपचारिकता होगी। यहां तक कि विबंधन का सिद्धांत भी लागू होगा। (गुर्जवान गरेवाल (डॉ.) बनाम डॉ. सुमित्रा दाश देखें)। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन तथ्य की स्थिति को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। इसे एक अनम्य सूत्र में नहीं बांधा जा सकता है। इसे प्रकरण के सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों के संदर्भ के

बिना लागू नहीं किया जा सकता है। (पंजाब राज्य बनाम जागीर सिंह और कर्नाटक एसआरटीसी बनाम एस.जी. कोट्टुरप्पा 5 देखें)

15. एम.वी.बिजलानी बनाम भारत संघ एवं अन्य (2006) 5 एससीसी 88) के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 25 में इस प्रकार टिप्पणी की है:–

"25. यह सत्य है कि न्यायिक पुनर्विलोकन में न्यायालय की अधिकारिता सीमित है। हालाँकि, अनुशासनात्मक कार्यवाही, अर्ध–न्यायिक प्रकृति की होने के कारण, आरोप को सिद्ध करने के लिए कुछ साक्ष्य होने चाहिए। हालाँकि विभागीय कार्यवाही में आरोपों को दांडिक विचारण की तरह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती है, अर्थात सभी युक्तियुक्त संदेह से परे, हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि जाँच अधिकारी अर्ध–न्यायिक कार्य करता है, जिसे दस्तावेजों का विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर आरोपों को सिद्ध करने की संभावना प्रबल थी। ऐसा करते समय, वह किसी भी असंगत तथ्य पर विचार नहीं कर सकता। वह सुसंगत तथ्यों पर विचार करने से इनकार नहीं कर सकता। वह साक्ष्य का भार किसी और पर नहीं डाल सकता। वह केवल अनुमानों और अटकलों के आधार पर साक्षी के सुसंगत परिसाक्ष्य को खारिज नहीं कर सकता। वह उन आरोपों की जाँच नहीं कर सकता, जिनके लिए अपचारी अधिकारी पर आरोप नहीं लगाया गया था।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. सर्वोच्च न्यायालय ने सिंडिकेट बैंक एवं अन्य बनाम वेंकटेश गुरुराव कुराटी {(2006) 3 एससीसी 150} के प्रकरण में कंडिका 18 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है:–

"18. हमारे विचार में, जिन दस्तावेजों पर जांच अधिकारी जांच के दौरान निर्भर नहीं है, उनका न दिया जाना अपचारी के प्रति कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न नहीं करता है। यह केवल वे दस्तावेज हैं जिन पर जांच अधिकारी अपने निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए भरोसा करता है, जिनकी आपूर्ति न किए जाने से पूर्वाग्रह उत्पन्न होगा, क्योंकि यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है। फिर भी, उन दस्तावेजों की आपूर्ति न किए जाने से अपचारी अधिकारी के प्रकरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, यह अपचारी अधिकारी द्वारा स्थापित किया जाना चाहिए। यह सुस्थापित विधि है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का सिद्धांत मूर्त नियम नहीं है। इसे एक अनम्य सूत्र में नहीं बांधा जा सकता है। यह प्रत्येक प्रकाण के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के आरोप को सिद्ध

करने के लिए, यह स्थापित करना होगा कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन न करने के कारण उसके प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न हुआ है।"

17. सर्वोच्च न्यायालय ने **तमिलनाडू सरकार और अन्य बनाम एस. वेल राज** (1997) 2 एस.सी.सी. 708) में अवलोकित किया कि "जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पुष्टि किए गए निष्कर्ष जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्य पर आधारित थे और यह भी तर्क नहीं दिया गया था कि उक्त निष्कर्ष विकृत थे। इसलिए, न्यायाधिकरण के लिए विपरीत निष्कर्ष दर्ज करना और यह मानना उचित नहीं था कि उत्तरवादी के विरुद्ध आरोप सिद्ध नहीं हुआ।"

18. सर्वोच्च न्यायालय ने **कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त व अन्य** {(1999) 2 एस.सी.सी. 103 के प्रकरण में निम्नानुसार अवलोकित किया:–

"9. सामान्यतः उच्च न्यायालय और यह न्यायालय घरेलू जांच में दर्ज तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे, लेकिन यदि "अपराध" का निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, तो यह विपरीत निष्कर्ष होगा और न्यायिक जांच के अधीन होगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. इसलिए, उन निर्णयों के बीच एक व्यापक अंतर बनाए रखना होगा जो विकृत हैं और जो विकृत नहीं हैं। यदि कोई निर्णय बिना किसी साक्ष्य के या ऐसे साक्ष्य के आधार पर लिया जाता है जो पूरी तरह से अविश्वसनीय है और कोई भी विवेकशील व्यक्ति उस पर कार्यवाही नहीं करेगा, तब आदेश विकृत होगा। लेकिन अगर अभिलेख पर कुछ ऐसे साक्ष्य हैं जो स्वीकार्य हैं और जिन पर भरोसा किया जा सकता है, चाहे वे कितने भी संक्षिप्त क्यों न हों, निष्कर्षों को विकृत नहीं माना जाएगा और निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा"।

19. **योगीनाथ बागड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य व एक अन्य** {(1999) 7 एससीसी 739) के एक अन्य प्रकरण में, सर्वोच्च न्यायालय ने पहले के निर्णयों पर विचार करने के बाद निम्नानुसार अवलोकित किया:–

"51....विधि में यह सुस्थापित है कि यदि निष्कर्ष अनुचित हैं और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं हैं या घरेलू जांच में दर्ज किए गए निष्कर्ष ऐसे हैं जिन तक कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति नहीं पहुंच सकता, तो उच्च न्यायालय और इस न्यायालय के लिए प्रकरण में हस्तक्षेप करना उचित होगा। कुलदीप बनाम पुलिस आयुक्त में इस न्यायालय ने नंद किशोर प्रसाद बनाम बिहार राज्य, आंध्र प्रदेश राज्य बनाम रामा राव, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया

लिमिटेड बनाम प्रकाश चंद जैन, भारत आयरन वर्क्स बनाम भागुभाई बालुभाई पटेल और राजिंदर कुमार किंद्रा बनाम दिल्ली प्रशासन में पहले के निर्णयों का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि हालांकि न्यायालय विभागीय जांच में अनुशासनात्मक प्राधिकारी या जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को अपील के रुप में ग्रहण नहीं कर सकता, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि किसी भी परिस्थिति में न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता। यह देखा गया कि संविधान के अधीन उच्च न्यायालय और इस न्यायालय को उपलब्ध न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति घरेलू जांच को भी अपने दायरे में लेती है और न्यायालय इसमें प्राप्त निष्कर्षों में हस्तक्षेप कर सकते हैं यदि निष्कर्षों का समर्थन करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है या दर्ज किए गए निष्कर्ष सही नही हैं या तो वे ऐसे थे जिन तक कोई सामान्य विवेकशील व्यक्ति नहीं पहुंच सकता था या फिर निष्कर्ष विकृत थे।"

20. **बी.सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ एवं अन्य** {(1995) 6 एससीसी 749} के प्रकरण में निम्न प्रकार से टिप्पणी की गई:–

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"12. न्यायिक पुनर्विलोकन किसी निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं है, बल्कि निर्णय लेने के तरीके का पुनर्विलोकन है। न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि व्यक्ति को उचित व्यवहार मिले, न कि यह सुनिश्चित करना कि अधिकारी जिस निष्कर्ष पर पहुंचे वह न्यायालय की दृष्टि में आवश्यक रूप से सही है। जब किसी लोक सेवक द्वारा कदाचार के आरोपों पर जांच की जाती है, तो न्यायालय/न्यायाधिकरण यह निर्धारित करने के लिए चिंतित होता है कि क्या जांच किसी सक्षम अधिकारी द्वारा की गई थी या क्या नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन किया गया था। चाहे निष्कर्ष या परिणाम किसी साक्ष्य पर आधारित हों, जांच करने की शक्ति रखने वाले प्राधिकरण के पास तथ्य या निष्कर्ष पर पहुंचने का क्षेत्राधिकार, शक्ति और प्राधिकार है। लेकिन वह निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित होना चाहिए। न तो साक्ष्य अधिनियम के तकनीकी नियम और न ही उसमें परिभाषित तथ्य या साक्ष्य के प्रमाण, अनुशासनात्मक कार्यवाही पर लागू होते हैं। जब प्राधिकरण यह स्वीकार करता है कि साक्ष्य और निष्कर्ष उससे समर्थन प्राप्त करते हैं, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी यह मानने का हकदार है कि अपचारी अधिकारी आरोप का दोषी है। न्यायालय/न्यायाधिकरण अपनी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति में इस प्रकार कार्य नहीं करता है। अपीलीय प्राधिकारी अपने न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के प्रयोगों में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने तथा साक्ष्य के आधार पर अपने स्वतंत्र निष्कर्ष पर पहुंचने जैसे अपीलीय प्राधिकारी के रुप में कार्य नहीं कर सकता है। न्यायालय/न्यायाधिकरण उस स्थिति में हस्तक्षेप कर सकता है, जब प्राधिकारी ने अपचारी अधिकारी के विरुद्ध कार्यवाही नैसर्गिक

न्याय के नियमों के साथ असंगत तरीके से की हो या जांच के तरीके को निर्धारित करने वाले वैधानिक नियमों का उल्लंघन किया हो या जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा प्राप्त निष्कर्ष या निर्णय किसी साक्ष्य पर आधारित न हो। यदि कोई युक्तियुक्त व्यक्ति कभी भी ऐसे निष्कर्ष या निर्णय पर नहीं पहुंचता, तो न्यायालय/न्यायाधिकरण उस निष्कर्ष या निर्णय में हस्तक्षेप कर सकता है, तथा अनुतोष को इस प्रकार परिवर्तित कर सकता है कि वह प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों के लिए उपयुक्त हो।

21. एक अन्य नवीनतम निर्णय में, **वी. रमना बनाम ए.पी. एसआरटीसी एवं अन्य** {(2005) 7 एससीसी 338} में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है:–

"11. इन सभी निर्णयों में एक बात समान रूप से कही गई है कि न्यायालय को प्रशासक के निर्णय में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि वह अतार्किक न हो या प्रक्रियागत अनुचितता से ग्रस्त न हो या न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरने वाला न हो, इस अर्थ में कि वह तर्क या नैतिक मानकों की अवहेलना करता हो। वेडनसबरी के प्रकरण में जो कहा गया है, उसको ध्यान में रखते हुए न्यायालय प्रशासक द्वारा किए गए विकल्प की शुद्धता पर विचार नहीं करेगा और न्यायालय को प्रशासक के निर्णय के स्थान पर अपने निर्णय को प्रतिस्थापित नहीं करना चाहिए। न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक सीमित है, निर्णय तक नहीं।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

22. यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक सीमित है, निर्णय तक नहीं। वर्तमान प्रकरण में याचिकाकर्ता के विरुद्ध अधिरोपित आरोप के अभिकथन पर्याप्त साक्ष्यों के आधार पर स्थापित किए गए हैं, जिसके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति विवेकपूर्ण और निष्पक्षता से कार्य करते हुए अपचारी अधिकारी के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के निष्कर्ष पर पहुंच सकता है।

23. परिणामस्वरूप और ऊपर बताए गए कारणों से, यह याचिका विफल होती है और खारिज की जाती है। वाद व्यय के विषय में कोई आदेश नहीं दिया जाता हैं ।

सही/–

सतीश के अग्निहोत्री

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Mr. Vijay Kumar Sahu, Advocate

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur